[2021] 9 एस. सी. आर. 652

के.एस. रंगनाथ

बनाम्

विट्ठल शेट्टी

(आपराधिक अपील संख्या 2011 का 1860)

8 दिसंबर, 2021

[एन. वी. रमना, सी.जे.आई, ए. एस. बोपन्ना और हिमा कोहली, जे. जे.]

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 - धारा 138 - चेक का अनादर - अपीलकर्ता को विचारण न्यायालय द्वारा रिहा कर दिया गया - उच्च न्यायालय द्वारा रिहा किए जाने के आदेश को पलट दिया गया - अपील पर, माना गया: उत्तरदाता ने अपनी प्रारंभिक उत्तरदायित्व का सफलतापूर्वक निर्वहन किया है - उसने स्थापित किया कि अपीलकर्ता द्वारा उस के पक्ष में हस्ताक्षरित चेक कानूनी रुप से वसूली योग्य राशि के निर्वहन की दिशा में जारी किया गया था - उभय पक्ष एक-दूसरे को जानते थे - अपीलकर्ता ने पहले के लेनदेन के बारे में स्वीकार किया है कि उसने राशि उधार ली और चुका दी - यह दर्शित करता है कि उभय पक्षों में पहले भी वित्तीय लेनदेन हुआ था और उनके बीच एक अन्य लेन-देन संभावित था - उत्तरदाता ने साबित करने के उत्तरदायित्व का निर्वहन किया है कि लेन देन वास्तव में हुआ था - उसी का खंडन करने के लिए, अपीलकर्ता द्वारा बचाव में कहा गया कि वर्तमान कार्यवाही में उसे धमकी देकर दस्तावेज एवं चेक प्राप्त किये गये थे और इस बात के लिए एक दूसरी कार्रवाई हुई, जिसमें उत्तरदाता को रिहा कर दिया गया - अपीलकर्ता की रिहाई उचित नहीं है - आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया गया है - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – एस.एस.2(डी) आर/डब्ल्यू 200 - दंड संहिता, 1860 - एसएस.365, 342, 323, 506 परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 - धारा 118(ए), 139 - अनुमान के अंतर्गत - खंडन करने का दायित्व - प्रमाण का मानक - चर्चा की गई।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 2011 का 1860

आपराधिक अपील संख्या 2008 का 485 में बैंगलोर स्थित कर्नाटक उच्च न्यायालय के दिनांक 18.08.2010 के निर्णय और आदेश से।

एस. एन. भट, सुश्री पार्वती भट, अपीलार्थी के लिए अधिवक्ता।

रणजी थॉमस, वरीय अधिवक्ता, वी. एन. रघुपति, के. के. एल. गौतम, राहुल मोहोद, उत्तरदाता के लिए अधिवक्ता।

न्यायालय का निर्णय **ए. एस. बोपन्ना, जे.** द्वारा दिया गया था।

1. अपीलकर्ता इस न्यायालय के समक्ष आपराधिक अपील संख्या 2008 का 485 में कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 18.08.2010 के फैसले पर आक्षेप कर रहा है। उक्त निर्णय के अनुसार, विद्वान एकल न्यायाधीश ने उत्तरदाता द्वारा दाखिल किया गया अपील स्वीकृत किया है और आपराधिक मामला संख्या 2004 के 3207 के फैसले को, जिसमें तृतीय अवर सिविल जज (जूनियर डिवीजन) और जे.एम.एफ.सी, उडुपी ने अपीलकर्ता को रिहा कर दिया था, को रद्द कर दिया है। फलस्वरुप, अपीलकर्ता को दोषी ठहराया गया और 4,00,000/- रुपये (चार लाख रुपये) का मुआवजा चार महीने के भीतर देने की सजा सुनाई गई। व्यतिक्रम की स्थिति में, अपीलकर्ता को छह महीने की अवधि के लिए साधारण कारावास की सजा सुनाई गई थी। अपीलकर्ता को राज्य को 5,000/- रुपये (पांच हजार रुपये) का जुर्माना देने का आदेश दिया गया, और व्यतिक्रम की स्थिति में 15 दिनों की अवधि के लिए साधारण कारावास भुगतने का आदेश दिया गया। इसलिए अपीलकर्ता यहां दिए गए आक्षेपित फैसले से व्यथित होने का दावा कर रहा है।

2. तथ्यात्मक आव्यूह, संक्षेप में, यह है कि अपीलकर्ता और उत्तरदाता एक दूसरे को जानते हैं। ये दोनों कर्नाटक के उडुपी के रहने वाले हैं। उत्तरदाता ने अपीलकर्ता के विरुद्ध दण्ड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'सी.आर.पी.सी') की धारा 200 के साथ पठित धारा 2(डी) के तहत एक निजी परिवाद दर्ज किया, जिसमें मांग किया गया कि उसे परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (संक्षेप में 'एन.आई. अधिनियम') की धारा 138 के तहत दंडनीय अपराध करने के लिए दंडित किया जाए। परिवाद दिनांक 17.03.2004 को द्वितीय अवर सिविल जज (जूनियर डिवीजन) और जे.एम.एफ.सी, उडुपी के समक्ष पी.सी. संख्या 2004 के 213 के रूप में दाखिल की गई थी, जिसे उसके बाद सी.सी. संख्या 2004 के 3207 के रूप में पंजीकृत किया गया था। यह उत्तरदाता का मामला था कि अपीलकर्ता ने धन उधार देने और भूमि दलाली का व्यवसाय किया, जिसके लिए आवश्यकता पड़ने पर वह उत्तरदाता से ऋण लेता था। ऐसे ही एक लेन-देन में, उत्तरदाता द्वारा प्रस्तुत मामले के अनुसार, अपीलकर्ता ने उत्तरदाता से दिनांक 12.06.2003 को 3,75,000/- रुपये (तीन लाख पचहत्तर हजार रुपये) की राशि उधार ली थी और 'मांग पर वचन पत्र' और पावती में एक रसीद निष्पादित किया था। अपीलकर्ता ने 4,00,000/- रुपये (चार लाख रुपये) के लिए एक उत्तर दिनांकित चेक संख्या 062589 दिनांक 12.12.2003 भी जारी किया था, जिसमें छह महीने का ब्याज शामिल था। उक्त चेक कॉरपोरेशन बैंक, अम्बालपाडी शाखा, उडुपी पर जारी किया गया था।

3. उत्तरदाता के मामले के अनुसार, जब चेक 17.02.2004 को वसूली के लिए प्रस्तुत किया गया था, तो उसे अपीलकर्ता के खाते में "अपर्याप्त धनराशि" के कारण बैंक द्वारा अनादृत कर दिया गया था। 18.02.2004 को एक कानूनी नोटिस जारी होने और 4,00,000/- रुपये (चार लाख रुपये) के भुगतान की मांग का अनुपालन नहीं होने पर, उत्तरदाता ने क्षेत्राधिकार-न्यायालय में परिवाद दर्ज किया, जिसका विवरण ऊपर दिया गया है। हालांकि, अपीलकर्ता ने बचाव में कहा कि यद्यपि उसने वर्ष 1995 में उत्तरदाता से 80,000 रुपये की राशि उधार ली थी, लेकिन उसे ब्याज के साथ 3,20,000/- रुपये (तीन लाख बीस हजार रुपये) विभिन्न चेकों के माध्यम से चुकाया गया था और कोई अतिरिक्त राशि देय नहीं थी। इसलिए अपीलकर्ता ने इस बात से इनकार किया कि उसने 12.06.2003 को कोई ऋण लिया था, जैसा कि आरोप लगाया गया है। अपीलकर्ता का यह भी मामला था कि उत्तरदाता ने 20.01.2004 को उसके साथ मारपीट की और धमकी दी थी और बलपूर्वक सादे कागजों और कुछ चेक पृष्ठों पर उसके हस्ताक्षर ले लिए थे, जिनका दुरुपयोग किया जा रहा था। अपीलकर्ता ने इस संबंध में 02.02.2004 को परिवाद दर्ज कराया था, जिसकी सुनवाई सी.सी संख्या 6318/2004 में अवर सिविल जज (जूनियर डिवीजन) और जे.एम.एफ.सी, उडुपी की न्यायालय में हुई थी। हालाँकि, स्वीकार किया गया है कि दिनांक 06.12.2006 के फैसले के माध्यम से उत्तरदाता को उक्त कार्यवाही में रिहा कर दिया गया था, जो अंतिम रूप ले चुका है।

4. यह तर्क देने के लिए कि उत्तरदाता द्वारा चेक के अनादरण का आरोप लगाने वाला परिवाद अभिप्रेरित थी, अपीलकर्ता ने आरोप लगाया कि चूंकि उस पर कर्ज हो गया था, इसलिए उसने अपनी संपत्ति में से एक संपत्ति, जो वर्ष 1994 में खरीदी गई थी, को बेचने का फैसला किया, ताकि उक्त कर्ज का भुगतान किया जा सके। उत्तरदाता ने इसे 3,00,000/- रुपये (तीन लाख रुपये) में खरीदने में रुचि दिखाई, लेकिन अपीलकर्ता ने इसे उत्तरदाता को बेचने से इनकार कर दिया क्योंकि उसके अनुसार, उक्त संपत्ति का मूल्य 7,00,000/- रुपये (सात लाख रुपये) से अधिक था। अपीलकर्ता ने आरोप लगाया कि उत्तरदाता ने झूठे आरोपों के आधार पर तत्काल परिवाद दर्ज किया था।

5. विरोधी तर्कों पर, विद्वान विचारण न्यायाधीश ने विचार के लिए यह मुद्दा उठाया, कि क्या उत्तरदाता ने यह साबित कर दिया है कि दिनांक 12.12.2003 का 4,00,000/- रुपये (चार लाख रुपये) का चेक अपीलकर्ता द्वारा कानूनी ऋण या दायित्व का निर्वहन करने के लिए जारी किया गया था और इस तरह धारा 138 एन.आई. अधिनियम के तहत दंडनीय अपराध किया गया था। विद्वान विचारण न्यायाधीश ने अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत संस्करण को स्वीकार करते हुए रिहा करने का आदेश पारित किया। दूसरी ओर, उच्च

न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने उत्तरदाता के मामले को स्वीकार कर लिया है और चेक जारी करने पर उत्पन्न होने वाली उपधारणा को ध्यान में रखते हुए और न्यायालय द्वारा बताए गए कारणों से ऐसी उपधारणा का खंडन नहीं किए जाने पर अपील को स्वीकृति दी है और अपीलकर्ता को दोषी ठहराया, जिसके परिणामस्वरूप यह अपील हुई।

6. हमने अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री एस.एन. भट्ट, श्री रंजी थॉमस, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के साथ श्री वी.एन. रघुपति, उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता को सुना और अपील के दस्तावेजों का अवलोकन किया।

7. हमारे समक्ष रखे गए विरोधी तर्कों और अभिलेखों से उभरे तथ्यों से यह स्पष्ट है कि चेक संख्या 062589 दिनांक 12.12.2003 4,00,000/- रुपये (चार लाख रुपये) की राशि के लिए कॉरपोरेशन बैंक, अंबालपाडी शाखा, उडुपी को जारी किया गया था उसे अभिलेख में लाया गया है, जो कि सी.सी. संख्या 3207/2004 में परिवाद का विषय है। हालाँकि, जो बचाव के रूप में कहा गया था, उसके आलोक में विचार करने योग्य मुद्दा यह है कि क्या उक्त चेक वास्तव में कानूनी ऋण के निर्वहन की दिशा में अपीलकर्ता द्वारा 12.06.2003 को उत्तर दिनांकित करके 12.12.2003 को और इसे उस तारीख या उसके बाद देय बनाकर जारी किया गया था।

8. चेक जारी होने पर कानून में उत्पन्न होने वाली उपधारणा से संबंधित कानूनी पहलू को प्रारंभिक स्तर पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है, जैसा कि ***के. प्रकाशन बनाम् पी.के सुरेंद्रन*** (2008) 1 एस.सी.सी 258 में इस न्यायालय के फैसले के संदर्भ में विचारण न्यायालय ने गौर किया था कि प्रारंभिक उत्तरदायित्व परिवादी पर है। अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने ***रेवरेंड मदर मैरीकुट्टी बनाम् रेनी सी. कोट्टाराम और अन्य*** (2013) 1 एस.सी.सी 327 के मामले में कंडिका 13 में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया है, जो इस प्रकार है;

> "**13.** इसके अलावा, विद्वान विचारण न्यायाधीश के निष्कर्षों पर विचार करने पर, हम पाते हैं कि वे निष्कर्ष अकाट्य और ठोस तर्क देकर निकाले गए थे और हमें विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा निकाले गए उक्त निष्कर्षों में कोई दोष नहीं लगता है। इस परिस्थिति में, *एम.एस. नारायण मेनन* में अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निकाले गए उपधारणा और संभावनाओं की प्रबलता के संबंध में निर्णय में निर्धारित सिद्धांत, जैसा कि कंडिका 31 से 33 में निर्धारित हैं, पूरी तरह से संतुष्ट हैं। कंडिका 31 से 33 में निर्धारित उन सिद्धांतों को उपयोगी रूप से संदर्भित किया जा सकता है, जो निम्नानुसार हैं:

"31. *भारत बैरल एंड ड्रम एमएफजी कंपनी बनाम् अमीन चंद पायरेलाल* मामले में इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने यद्यपि एक सिविल मामले में निम्नलिखित सिद्धांत में कानून निर्धारित किया था:

(एस.सी.सी पी.पी.50-51 कंडिका 12)

'12. ऊपर उल्लेखित तरीके से विभिन्न निर्णयों पर विचार करने पर कानून की स्थिति जो उभरती है वह यह है कि एक बार जब वचन पत्र के निष्पादन को स्वीकार कर लिया जाता है, तो धारा 118 (ए) के तहत यह उपधारणा उत्पन्न हो जाएगी कि यह एक प्रतिफल द्वारा समर्थित है। ऐसी उपधारणा का खंडन किया जा सकता है। उत्तरदाता संभावित बचाव प्रस्तुत करके किसी प्रतिफल की गैर-मौजूदगी को साबित कर सकता है। यदि यह साबित हो जाता है कि उत्तरदाता ने सबूत के प्रारंभिक दायित्व का निर्वहन कर दिया है, जिससे पता चलता है कि प्रतिफल का अस्तित्व असंभव या संदिग्ध था या वह अवैध था, तो जिम्मेदारी वादी पर स्थानांतरित हो जाएगी जो इसे तथ्य के रूप में साबित करने के लिए बाध्य होगा और इसे साबित करने में विफलता उसे परक्राम्य दस्तावेज के आधार पर राहत पाने से वंचित कर देगी। उत्तरदाता पर प्रतिफल की गैर-मौजूदगी को साबित करने का भार या तो प्रत्यक्ष हो सकता है या उन परिस्थितियों के संदर्भ में संभावनाओं की प्रबलता को अभिलेख पर लाकर हो सकता है जिन पर वह भरोसा करता है। ऐसी स्थिति में, वादी कानून के तहत दिए गए सभी साक्ष्यों वादी सहित पर भरोसा करने का हकदार है। ऐसे मामले में, जहां उत्तरदाता प्रतिफल की गैर-मौजूदगी दिखाकर सबूत के प्रारंभिक दायित्व का निर्वहन करने में विफल रहता है, तो वादी को धारा 118 (ए) के तहत उसके पक्ष में उत्पन्न होने वाले उपधारणा के लाभ का हकदार माना जाएगा। न्यायालय उत्तरदाता पर प्रत्यक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करके प्रतिफल के अस्तित्व को गलत साबित करने के लिए जोर नहीं दे सकती क्योंकि नकारात्मक साक्ष्य का अस्तित्व न तो संभव है और न ही परिकल्पित है और यदि पेश किया भी जाता है, तो उसे संदेह की नजर से देखा जाता है।'

इसलिए, इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से मंतव्य दिया कि उत्तरदाता के लिए प्रत्यक्ष साक्ष्य के माध्यम से प्रतिफल के अस्तित्व को गलत साबित करना आवश्यक नहीं है।

32. प्रमाण का मानक स्पष्टतः संभावनाओं की प्रबलता है। संभावनाओं की प्रबलता का उपधारणा न केवल अभिलेख पर मौजूद तथ्यों से लगाया जा सकता है, बल्कि उन परिस्थितियों के संदर्भ में भी लगाया जा सकता है जिन पर वह निर्भर करता है।

33. किसी क़ानून के तहत बनाई गई उपधारणा का केवल साक्ष्यात्मक मूल्य होता है। साक्ष्य अधिनियम के संदर्भ में उपधारणा लगाई जाती हैं। एक तथ्य के संबंध में बनाई गई उपधारणा दूसरे के तहत उपधारणा बनाने के उद्देश्य से भी साक्ष्य हो सकती है।

उपरोक्त सिद्धांतों को मामले में लागू करने पर, हम पाते हैं कि विचारण न्यायालय के फैसले द्वारा इस आशय का निष्कर्ष निकालना कि अपीलकर्ता ने अधिनियम की धारा 138 और 139 के तहत चेक जारी करने के संबंध में प्रारंभिक उपधारणा को पर्याप्त रूप से गलत साबित कर दिया, बिल्कुल उचित था। हम यह भी पाते हैं कि संभावनाओं की प्रबलता भी अपीलकर्ता के रुख का पूरी तरह से समर्थन करती है जैसा कि विद्वान विचारण न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया था। इसलिए, उचित तर्क के बिना विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा पारित रिहा करने के आदेश में हस्तक्षेप करने के उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द कर दिया जाना चाहिए और तदनुसार रद्द कर दिया जाता है।

परिणामस्वरूप, [आपराधिक अपील संख्या 2007 का 1707, आदेश दिनांक 17-3-2010 (केर)] में आक्षेपित निर्णय में लगाई गई दोषसिद्धि और सजा को भी रद्द कर दिया जाता है।"

9. दूसरी ओर, उत्तरदाता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने **कलामणि टेक्स एवं अन्य बनाम् पी. बालासुब्रमण्यम** (2021) 5 एस.सी.सी 283 के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया, जो इस प्रकार है:

"16. अपीलकर्ताओं ने किसी भी वसूली योग्य ऋण के अस्तित्व पर विवाद करने के लिए D.W. 1 के साक्ष्य पर भरोसा किया है। हालाँकि, उनका बयान केवल इस बात पर प्रकाश डालता है कि उत्तरदाता के पास बैंक के साथ अति विस्तारित ऋण सुविधा थी और अपने खाते को अद्यतन करने में विफलता के कारण ऋण वसूली की कार्यवाही शुरू हुई। इस तरह के साक्ष्य अपीलकर्ताओं के दायित्व को गलत साबित नहीं करते हैं और उत्तरदाता की परिवाद के गुणदोष पर थोड़ा असर डालते हैं। इसी प्रकार, अपीलकर्ता 2 के हस्ताक्षरों को स्वीकार करने के बावजूद, दिनांक 7-11-2000 के उपक्रम विलेख की वास्तविकता के संबंध में अपीलकर्ताओं का केवल साधारण इनकार, उक्त दस्तावेज़ की वास्तविकता पर कोई संदेह नहीं उत्पन्न करता है।

17. अगर हम अपीलकर्ताओं द्वारा उठाए गए तर्कों को ही लेते हैं कि उत्तरदाता को केवल एक रिक्त चेक और हस्ताक्षरित रिक्त गैर न्यायिक पत्र दिए गए थे, फिर भी वैधानिक उपधारणा को अभिलोपित नहीं किया जा सकता है। बीर सिंह बनाम् मुकेश

कुमार [बीर सिंह बनाम् मुकेश कुमार] का हवाला देना उपयोगी है, जहां इस न्यायालय ने कहा कि: (एस.सी.सी पृष्ठ 209, कंडिका 36)

"36. यहां तक कि अभियुक्त द्वारा स्वेच्छा से हस्ताक्षरित और सौंपा गया एक रिक्त चेक पृष्ठ, जो भुगतान के लिए है, भी परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 139 के तहत उपधारणा को आकर्षित करेगा, किसी ठोस सबूत से यह दिखाने के अभाव में कि चेक किसी कर्ज के निर्वहन में जारी नहीं किया गया था।"

18. इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उभय पक्षों के बीच एक स्वीकृत व्यावसायिक संबंध रहा है, हमारा विचार है कि अपीलकर्ताओं द्वारा उठाया गया बचाव विश्वास को प्रेरित नहीं करता है या "संभावना की प्रबलता" के मानक को पूरा नहीं करता है। किसी भी अन्य प्रासंगिक तथ्यों के अभाव में, हमें ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ताओं के बचाव को खारिज करने और एन.आई. अधिनियम की धारा 118 और धारा 139 के तहत उन पर लगाए गए दायित्व को बरकरार रखने में कोई गलती नहीं की है।

19. जहां तक उत्तरदाता की ओर से उठाए गए मुआवजे के दावे का संबंध है, हम स्थापित सिद्धांतों के प्रति सचेत हैं कि एन.आई. अधिनियम के अध्याय XVII का उद्देश्य न केवल दंडात्मक है, बल्कि प्रतिपूरक और पुनर्स्थापनात्मक भी है। एन.आई. अधिनियम के प्रावधान चेक के अनादरण के लिए आपराधिक दायित्व के साथ-साथ चेक राशि की वसूली के लिए नागरिक दायित्व के लिए एकल विकल्प की कल्पना करते हैं। यह भी अच्छी तरह से स्थापित है कि मुआवजा देने के लिए एक सुसंगत दृष्टिकोण की आवश्यकता है और जब तक कोई विशेष परिस्थिति न हो, न्यायालयों को समान रूप से 9% प्रति वर्ष की दर से साधारण ब्याज के साथ चेक राशि का दोगुना तक जुर्माना लगाना चाहिए।

10. ***त्रियंबक एस. हेगड़े बनाम् श्रीपाद*** में आपराधिक अपील संख्या 2011 के 849-850 में दिनांक 23.09.2021 के फैसले पर ध्यान देना भी उचित होगा, जिसमें इस प्रकार कहा गया था:

"12. जहां तक उत्तरदाता द्वारा चेक पर हस्ताक्षर किए जाने के संदर्भ में अपीलकर्ता द्वारा राशि के भुगतान की बात है, तो एन.आई. अधिनियम की धारा 118 (ए) के तहत दिए गए प्रावधान के अनुसार प्रतिफल हस्तांतरित होने की उपधारणा लगाई जाएगी, जो इस प्रकार है:-

"118. परक्राम्य लिखतों के बारे में उपधारणाएँ - जब तक कि प्रतिकूल साबित न हो जाए, निम्नलिखित उपधारणाएँ बनाई जाएँगी:

> **(ए)** प्रतिफल के विषय में - प्रत्येक परक्राम्य लिखत प्रतिफल के लिए बनाया या तैयार किया गया था, और ऐसा प्रत्येक लिखत, जब इसे प्रतिगृहीत, पृष्ठांकित, परक्रमित या अन्तरित हो चुकी हो तब वह प्रतिफलार्थ, प्रतिगृहीत, पृष्ठांकित, परक्रमित या अन्तरित की गई थी।"

13. उपर्युक्त प्रावधान इस आशय के लिए सुव्यक्त हैं कि ऐसी उपधारणा तब तक बनी रहेगी, जब तक कि इसके प्रतिकूल साबित न हो जाए। इस संबंध में अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने ***के. भास्करन बनाम् शंकरन वैध्यन बालन और अन्य*** (1999) 7 एस.सी.सी 510 में इस न्यायालय के फैसले पर निर्भर हैं, जिसमें निम्नानुसार कहा गया है:

> "9. चूंकि चेक में अभियुक्त के हस्ताक्षर को स्वीकृत किया गया है, अधिनियम की धारा 118 में परिकल्पित उपधारणा कानूनी तौर पर लगाई जा सकती है कि चेक उस तारीख को प्रतिफल के लिए बनाया गया था या निकाला गया था, जो चेक पर अंकित है। अधिनियम की धारा 139 न्यायालय को यह उपधारणा करने का आदेश देती है कि चेक धारक ने इसे किसी ऋण या दायित्व के निर्वहन के लिए प्राप्त किया है। उपरोक्त उपधारणा का खंडन करने का भार अभियुक्त पर था। विचारण न्यायालय को उपधारणा का खंडन करने के लिए D.W. - 1 की हितबद्ध गवाही पर भरोसा करने के लिए राजी नहीं किया जा सका था। उक्त निष्कर्ष को उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया था। अब अभियुक्त के लिए उस पहलू पर भिन्न प्रकार से बहस करना संभव नहीं है।"

14. उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता ने हालांकि ***बसलिंगप्पा बनाम् मुदीबसप्पा*** (2019) 5 एस.सी.सी 418 में इस न्यायालय के फैसले का उल्लेख किया है, जिसमें निम्नानुसार कहा गया है:

> "25. हमने धारा 118(ए) और 139 पर उपरोक्त मामलों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित "निर्णय के औचित्य" पर ध्यान देने के बाद, अब इस न्यायालय द्वारा बताए गए सिद्धांतों को निम्नलिखित तरीके से सारांशित करते हैं:

25.1. एक बार जब चेक का निष्पादन स्वीकार कर लिया जाता है तो अधिनियम की धारा 139 यह उपधारणा बाध्य करता है कि चेक किसी ऋण या अन्य देनदारी के निर्वहन के लिए था।

25.2. धारा 139 के तहत उपधारणा एक खंडन योग्य उपधारणा है और संभावित बचाव का दायित्व अभियुक्त पर है। उपधारणा का खंडन करने के लिए प्रमाण का मानक संभावनाओं की प्रबलता है।

25.3. उपधारणा का खंडन करने के लिए, अभियुक्त के लिए अपने द्वारा दिए गए सबूतों पर भरोसा करना अनुज्ञेय है या अभियुक्त संभावित बचाव के लिए परिवादकर्ता द्वारा प्रस्तुत तथ्यों पर भी भरोसा कर सकता है। संभावनाओं की प्रबलता का उपधारणा न केवल उभय पक्षों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत किये गये तथ्यों पर लगाया जा सकता है, बल्कि उन परिस्थितियों के संदर्भ में भी लगाया जा सकता है जिन पर वे भरोसा करते हैं।

25.4. यह कि अभियुक्त के लिए अपने बचाव के समर्थन में साक्षी कठघरा में आना आवश्यक नहीं है, धारा 139 एक साक्ष्यात्मक भार डालती है न कि प्रेरक भार।

25.5. अभियुक्त के लिए अपने बचाव का समर्थन करने के लिए साक्षी कठघरा में आना आवश्यक नहीं है।

11. जैसा कि ऊपर उल्लेखित है, कानून की स्थिति यह स्पष्ट करती है कि जब कोई चेक जारी किया जाता है और अदाकर्ता उस पर भरोसा करता है, तो यह उपधारणा लगाई जाएगी कि यह एक ऐसे प्रतिफल के लिए तैयार किया गया है जो कानूनी रूप से वसूली योग्य राशि है; निःसंदेह, ऐसी उपधारणा को गलत साबित करके खंडन किया जा सकता है। संभावित बचाव पेश करने का दायित्व अभियुक्त पर है और उपधारणा का खंडन करने के लिए सबूत का मानक संभावनाओं की प्रबलता पर है।

12. प्रतिपादित की जा रही वैधिक परिस्थिति की पृष्ठभूमि में, यहां दिए गए तथ्यों पर ध्यान दिया जाना चाहिए। यहां उत्तरदाता का मामला यह था कि अपीलकर्ता ने 12.06.2003 को 3,75,000/- रुपये (तीन लाख पचहत्तर हजार रुपये) की राशि उधार ली थी, जिसे छह महीने में ब्याज के साथ चुकाने पर सहमति हुई थी। इसलिए, कॉर्पोरेशन बैंक पर आहृत 4,00,000/- रुपये (चार लाख रुपये) का चेक संख्या 062589 दिनांक 12.12.2003 को जारी किया गया था। यह सच है कि उत्तरदाता ने 'मांग पर वचन पत्र' पर भरोसा किया था और कहा था कि उस वक़्त श्री हरीश मूल्या भी मौजूद थे। कथित श्री हरीश

मूल्या, जिन्होंने 'मांग पर वचन पत्र' पर गवाह के रूप में भी हस्ताक्षर किए थे, से गवाह के रूप में पूछताछ नहीं की गई, जिसके कारण विद्वान विचारण न्यायाधीश ने लेन-देन को साबित नहीं माना और उस संदर्भ में यह माना गया कि उत्तरदाता उचित संदेह से परे मामले को साबित करने में विफल रहा। हालाँकि, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि उत्तरदाता ने चेक जारी करने से संबंधित साक्ष्य प्रस्तुत किया था और प्रारंभिक जिम्मेवारी से मुक्ति पा ली थी।

13. विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा अपने निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए संपूर्ण ध्यान अपीलकर्ता द्वारा लगाए गए आरोप पर आधारित था कि 20.01.2004 को एक घटना हुई थी जब उत्तरदाता ने बल प्रयोग कर कुछ चेक और सादे कागजों पर हस्ताक्षर प्राप्त किए थे। यह मानने के लिए कि यदि चेक वास्तव में 12.12.2003 दिनांकित था और पहले जारी किया गया था, तो उसने इतने लंबे समय तक इंतजार नहीं किया होता, उत्तरदाता द्वारा फरवरी 2004 के दौरान चेक प्रस्तुत करने के बारे में बहुत कुछ कहा गया है। ऐसी उपधारणा उचित नहीं होगी, जब वास्तव में, चेक दिनांक 12.12.2003 का था और इसकी वैधता की अवधि के भीतर प्रस्तुत किया गया था। अपीलकर्ता द्वारा 20.01.2004 को घटी घटना को सच मानने के लिए चेक की तारीख 20.01.2004 या उसके बाद की होनी चाहिए। चेक की प्रस्तुति की तारीख का कोई महत्व नहीं है, बशर्ते कि इसे इसकी वैधता अवधि के भीतर प्रस्तुत किया गया हो। यह कि कथित अपराध उत्तरदाता द्वारा 20.01.2004 को ही किया गया था इसपर सी.सी. संख्या 6318/2004 में विमर्श किया गया था। जब एक क्षेत्राधिकार वाली न्यायालय ने उसी आरोप पर गौर किया था और 06.12.2006 को अपना फैसला सुनाया था, तो समन्वित क्षेत्राधिकार प्रयुक्त करने वाली एक अन्य न्यायालय इसे हल्के में नहीं ले सकती थी।

14. उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने भी पिछली कार्यवाही को केवल एक संदर्भ के रूप में हवाला दिया। मौजूदा मामले में, जिस बात पर ध्यान देने की जरूरत है वह, वह बचाव है जो यहां उत्तरदाता के मामले को परास्त करने के लिए विद्वान दंडाधिकारी के समक्ष रखा गया था, ताकि यह विचार किया जा सके कि क्या अपीलकर्ता के ऐसे तर्क को अभी भी संभावित बचाव के रूप में माना जा सकता है। वर्तमान मामले में अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत बचाव अर्थात, सी.सी. संख्या 3207/2004 में धारा 138 एन.आई. अधिनियम की कार्यवाही, जैसा कि फैसले के दौरान विद्वान दंडाधिकारी द्वारा संदर्भित किया गया है, इस प्रकार है:

> "आगे यह आरोप लगाया गया है कि वर्ष 2003 में, कुछ अन्य लोगों को बकाया चुकाने के लिए, अभियुक्त ने उपरोक्त संदर्भित संपत्ति को बेचने का फैसला किया और अभियुक्त ने परिवादकर्ता के समक्ष अपनी संपत्ति बेचने की इच्छा व्यक्त की। उस समय, परिवादकर्ता ने अभियुक्त से उक्त संपत्ति 3,00,000/- रुपये में खरीदने का

प्रस्ताव रखा, लेकिन अभियुक्त ने परिवादकर्ता को उक्त संपत्ति 3,00,000/- रुपये (तीन लाख रुपये) में बेचने से इनकार कर दिया, क्योंकि संपत्ति की कीमत 7,00,000/- रुपये (सात लाख रुपये) है। परिवादकर्ता द्वारा छोटी राशि के लिए दिए गए प्रस्ताव के मद्देनजर, अभियुक्त ने अपनी संपत्ति बेचने से मना कर दिया है। इसके बाद, जब अभियुक्त ने स्वयं उक्त संपत्ति खरीदने के लिए ग्राहकों की तलाश शुरू कर दी, उस समय परिवादकर्ता ने उन प्रस्तावित खरीदारों को गुमराह किया जो उक्त संपत्ति खरीदने के लिए तैयार थे, यह दर्शाते हुए कि उक्त संपत्ति अभियुक्त द्वारा उस ऋण के उद्देश्य से गिरवी रखी गई थी, जो अभियुक्त द्वारा परिवादकर्ता से ली हुई पूंजी से प्राप्त किया गया था और तदनुसार, जो खरीदार इसे खरीदने के लिए आगे आए, उन्होंने उक्त संपत्ति खरीदने से इनकार कर दिया, जिससे अभियुक्त ने उक्त संपत्ति का कुछ हिस्सा अपने लेनदारों को और कुछ हिस्सा अपनी पत्नी के नाम पर हस्तांतरित कर दिया। जब तथ्य इस प्रकार सामने आए, तो 20.1.04 को अभियुक्त अपनी दो पहिया वाहन से उडुपी में तालुक कार्यालय गया, तो परिवादकर्ता ने अपनी मारुति ओमनी वाहन से अभियुक्त का पीछा किया और उसके बाद, अभियुक्त का अपहरण कर लिया और उसे अपने कार्यालय में ले गया, जो उडुपी में श्री रामा भवन में स्थित था। जिसमें परिवादकर्ता ने गलत तरीके से अभियुक्त को निरुद्ध किया और उस पर हाथों से और लोहे की छड़ों से हमला किया और अभियुक्त की संपत्ति को नुकसान पहुंचाने के इरादे से कुछ सादे कागजों और कुछ चेक पृष्ठों पर जबरन हस्ताक्षर करा लिया। आगे आरोप है कि उस समय परिवादकर्ता ने अभियुक्त को चेतावनी दी थी कि वह अभियुक्त की पत्नी से कुछ कागजात ले आए क्योंकि संपत्ति अभियुक्त की पत्नी के नाम पर है। उस समय परिवादकर्ता ने आगे धमकी दी कि यदि अभियुक्त ने उक्त कथित कृत्य की जानकारी पुलिस को दी तो वह अभियुक्त के साथ-साथ अभियुक्त की पत्नी और बच्चों के जीवन का अंत कर देगा। उक्त घटना के बाद, परिवादकर्ता ने अभियुक्तों की गतिविधियों पर नजर रखने के लिए वेतनभोगी गुंडों को नियुक्त किया और उक्त गुंडे लोग हमेशा अभियुक्त के घर के अहाता के आसपास की गतिविधियों पर नजर रखते थे, जिससे परिवाद दर्ज करने में देरी हुई और तदनुसार, यहां अभियुक्त ने घटना की तारीख से लगभग 12 दिन बीतने के बाद 2.2.04 को परिवादकर्ता के खिलाफ परिवाद दर्ज किया। आगे यह भी आरोप लगाया गया है कि परिवादकर्ता आपराधिक दिमाग वाला है और उसकी लंबी आपराधिक पृष्ठभूमि रही है और उसे विभिन्न आपराधिक आरोपों जैसे भा०द०वि० की धारा 302 और 326 के तहत दंडनीय अपराधों का भी सामना करना पड़ा है और आपराधिक गतिविधियों में भी शामिल होना उनमें से है, यह घटना भी अभियुक्त पर लगे आरोपों में से एक है। आगे यह भी आरोप लगाया गया है कि अभियुक्त ने कभी भी चेक स्वैच्छिक रूप से आहृत नहीं किया था और उसे परिवादकर्ता द्वारा बलपूर्वक प्राप्त किया गया था और तदनुसार, परिवादकर्ता

के विरुद्ध भा०द०वि० की धारा 365, 342, 323 और 506 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए मामला दर्ज किया गया था और तदनुसार, परिवादकर्ता द्वारा अभियुक्त के खिलाफ चेक और कुछ अन्य दस्तावेजों का भी दुरुपयोग किया गया। उपरोक्त बचाव के आलोक में, अभियुक्त ने विनम्रतापूर्वक बरी होने की प्रार्थना की।

15. उपरोक्त का बारीकी से अवलोकन करने से पता चलता है कि बचाव का संक्षिप्त तथा ग्राह्य तात्पर्य यह है कि दस्तावेज़ और चेक उत्तरदाता द्वारा 20.01.2004 को अपीलकर्ता को धमकी देकर प्राप्त किए गए थे। उस संबंध में, परिस्थितियों का उल्लेख किया गया था और यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि अपीलकर्ता ने एक परिवाद दर्ज की थी, जिसके अनुसार उत्तरदाता के खिलाफ भा०द०वि० की धारा 365, 342, 323 और 506 के तहत दंडनीय अपराध के लिए मामला दर्ज किया गया था। इससे हमारे लिए उस पहलू पर ध्यान देना प्रासंगिक हो जाता है जिस पर अपीलकर्ता द्वारा दाखिल उपरोक्त आपराधिक परिवाद में विचार किया गया था। उक्त मामला सी.सी संख्या 6318/2004 के रूप में दर्ज किया गया था। उस मामले में, विद्वान दंडाधिकारी ने अपीलकर्ता द्वारा लगाए गए आरोप पर ध्यान देते हुए विचार के लिए बिंदु उठाए थे और निष्कर्षों को संक्षेप में प्रस्तुत किया गया था। वे इस प्रकार हैं:

"5. दोनों पक्षों को सुना और अभिलेख का अवलोकन किया। अब, इस न्यायालय के उचित विचार के लिए जो बिंदु उठते हैं, वे इस प्रकार हैं:

(1) क्या अभियोजन सभी उचित संदेहों से परे साबित करता है कि 20.1.2004 को लगभग 11 बजे ग्राम शिवल्ली में उडुपी नगर थाना के क्षेत्राधिकार में श्रीराम भवन में कमरा संख्या 11 यानी स्विता फाइनेंस के अंदर पुरानी दुश्मनी के कारण, अभियुक्त ने C.W.-1 के.एस. रंगनाथन को उक्त कंपनी के अंदर बंद कर दिया, जिससे C.W.-1 को गलत तरीके से सीमाबद्ध कर भा०द०वि० की धारा 342 के तहत दंडनीय अपराध किया गया ?

(2) क्या अभियोजन सभी उचित संदेहों से परे साबित करता है कि उसी तारीख, स्थान और समय पर, अभियुक्त ने स्वेच्छा से C.W.-1 के चेहरे, गर्दन और शरीर के अन्य हिस्सों पर अपने हाथों से हमला किया और इस तरह भा०द०वि० की धारा 323 के तहत दंडनीय अपराध किया ?

(3) क्या अभियोजन सभी उचित संदेहों से परे साबित करता है कि उसी तारीख, स्थान और समय पर, अभियुक्त ने C.W.-1, उसकी पत्नी और बच्चों को जान की धमकी दी, यदि C.W.-1 निर्धारित समय के भीतर ऋण राशि

वापस नहीं करेगा और इस प्रकार भा०द०वि० की धारा 506 का भाग II के तहत दंडनीय अपराध किया है।

(4) क्या आदेश ?

6. अब उपर्युक्त बिंदुओं पर इस न्यायालय के निष्कर्ष जो उचित विचार के लिए उठे हैं, उनका उत्तर इस प्रकार दिया गया है:

बिंदु संख्या 1: नकारात्मक

बिंदु संख्या 2 में: नकारात्मक

बिंदु संख्या 3 में: नकारात्मक

बिंदु संख्या 4 में: निम्नलिखित के लिए अंतिम आदेश के अनुसार."

16. उठाए गए बिंदुओं पर नकारात्मक निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए, विद्वान दंडाधिकारी ने विस्तृत कारण बताए हैं और इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि तालुक कार्यालय के पास हुई कथित घटना के संबंध में परिवादकर्ता के साक्ष्य स्वीकार्य नहीं हैं और इसलिए अभियोजन विफल रहा। इसके अलावा, हालांकि उक्त कार्यवाही में एक जांच की गई थी और मुकदमा आगे बढ़ गया था, कोई भी भौतिक वस्तु जब्त नहीं की गई थी, जिस पर विद्वान दंडाधिकारी ने टिप्पणी की है। यह दर्शाता है कि वर्तमान कार्यवाही में जिन चेक और अन्य दस्तावेजों पर भरोसा किया गया है, वे अपीलकर्ता को धमकी देकर नहीं बनाए गए थे, जैसा कि आरोप लगाया गया है। न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंची थी कि अभियोजन कथित अपराधों के लिए अभियुक्तों के खिलाफ सभी उचित संदेहों से परे अपना मामला साबित करने में बुरी तरह असफल रहा है। प्रासंगिक कार्यवाही में प्राप्त उक्त जाँच-परिणाम और निष्कर्ष यह संकेत है कि तथाकथित घटना जो 20.01.2004 को हुई थी, साबित नहीं हुई थी।

17. यदि ऐसी स्थिति है, तो बचाव पक्ष ने जो तत्काल मामले में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है और तत्काल कार्यवाही में जिन गवाहों की जांच की गई है, वे केवल उसी वादमूल के संबंध में सुधार के माध्यम से हैं। इसलिए, बल द्वारा प्राप्त किए गए चेक और अन्य दस्तावेजों के संबंध में जो बचाव प्रस्तुत किया गया है, उसे संभावित बचाव के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है, जब उत्तरदाता ने उस पर डाले गए प्रारंभिक जिम्मेदारी का सफलतापूर्वक निर्वहन किया कि अपीलकर्ता द्वारा हस्ताक्षरित चेक कानूनी रूप से वसूली योग्य राशि के निर्वहन के लिए उनके पक्ष में जारी किया गया था। यह तथ्य कि अपीलकर्ता ने पहले के लेनदेन के बारे में स्वीकार किया है, जहां उसके अनुसार, उसने राशि उधार ली थी और वर्ष 1995 में उसे चुकाया था, यह दर्शाता है कि अपीलकर्ता और उत्तरदाता ने पहले भी वित्तीय लेनदेन में प्रवेश किया था एवं एक और लेनदेन उभय पक्षों के बीच संभव था, जो एक-दूसरे को जानते थे। उत्तरदाता द्वारा स्थापित अन्य परिस्थितियों के आलोक में, यह

दर्शाता है कि उत्तरदाता ने यह साबित करने की जिम्मेवारी से मुक्ति पा ली है, की लेनदेन वास्तव में हुआ था। इसका खंडन करने के लिए, अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत मामले को संभावित बचाव के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है, क्योंकि उक्त पहलू पर पहले ही एक अलग कार्यवाही (सी.सी. संख्या 6318/2004) में विचार किया जा चुका है और उत्तरदाता को उक्त कार्यवाही में रिहा कर दिया गया है।

18. इसलिए, यहां अपीलकर्ता को बरी करने के लिए सी.सी. संख्या 3207/2004 में विद्वान दंडाधिकारी द्वारा निकाला गया निष्कर्ष उचित नहीं था। इसलिए उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश अपने निष्कर्ष में न्यायोचित थे, हालांकि, उनके द्वारा विस्तृत कारण नहीं बताए गए हैं। उस दृष्टिकोण से, हमें इस अपील में आपराधिक अपील संख्या 485/2008 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 18.08.2010 के आक्षेपित फैसले में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं दिखता है।

19. तदनुसार, अपील योग्यता विहीन होने के कारण खारिज की जाती है। उभय पक्ष अपनी लागत स्वयं वहन करेंगे।

20. लंबित आवेदन, यदि कोई हो, का निपटारा कर दिया जाता है।

लक्ष्मीकांत अपील खारिज।